कवर चित्र नं. 4 (सीढ़ी):-

ज्ञानियों, महात्माओं और दार्शनिकों ने पुरातन समय से ही मनुष्य के जन्म से पूर्व और मृत्यु के बाद के रहस्यों को जानने का बहुत प्रयास किया है। चूँकि इस्लाम और क्रिश्चियन धर्मों में आत्मा के पूर्वजन्मों को मान्यता नहीं दी गई है; इसलिए उन धर्मखण्डों के साहित्य या धार्मिक पुस्तकों में इस विषय पर कोई चर्चा नहीं की गई है; किंतु भारत में पूर्वजन्म की मान्यता सदियों से रही है; इसलिए इससे सम्बंधित ग्रंथों या पुस्तकों की कोई कमी नहीं है; किंतु केवल एक भूल के कारण भारतवासी अपने स्वर्णिम इतिहास और विश्व की अनेक सभ्यताओं और धर्मों के उद्भव एवं विकास में अपने योगदान को भूल गए हैं। वह भूल है देह-अभिमान के कारण यह समझना कि आत्मा 84 लाख योनियों में जन्म लेती है। फिर भी भगवान के अवतरण एवं मनुष्यों के पूर्वजन्मों को मान्यता देने के कारण ही भारत आज शिव भगवान की कर्मभूमि बना है।

Cover Picture No.4
कवर चित्र नं. 4

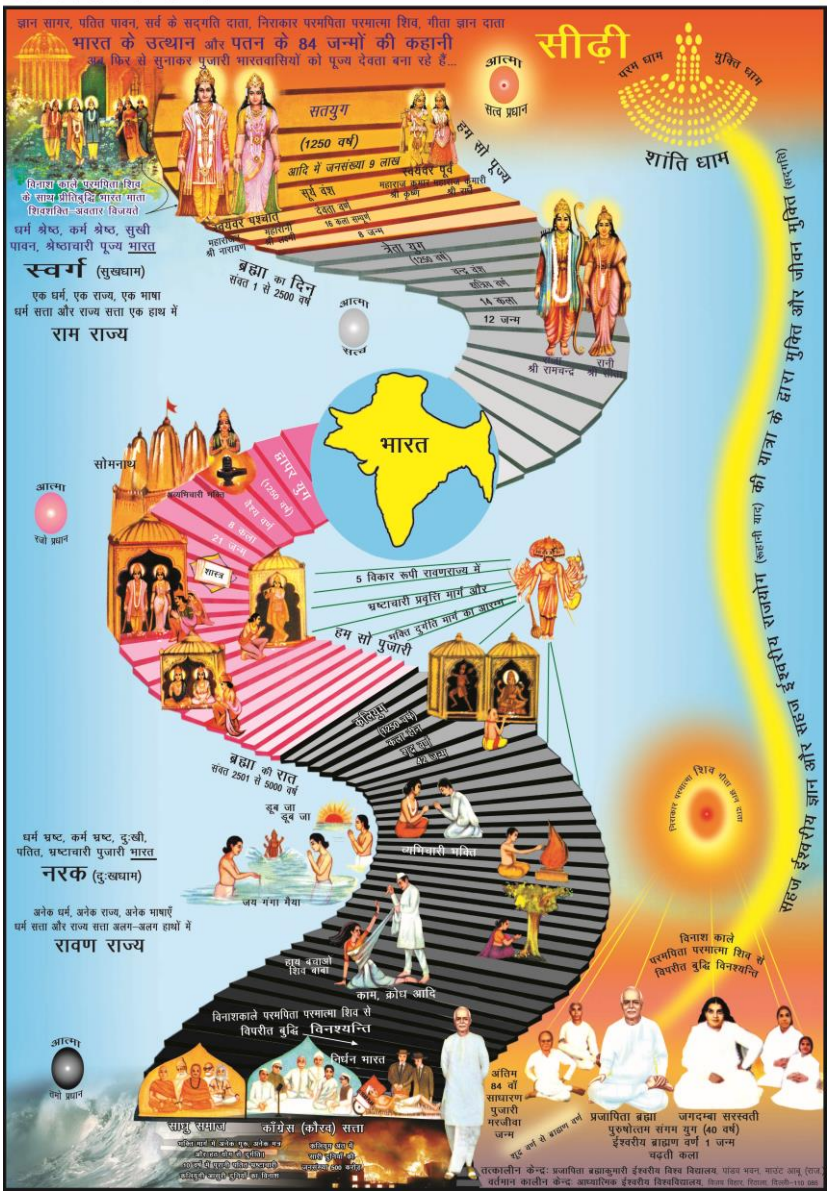

परमपिता शिव ही आकर मनुष्य-आत्माओं को उनके अनेक जन्मों की कहानी सुनाते हैं। चूँकि वे ही जन्म-मरण के चक्र से न्यारे हैं और त्रिकालदर्शी हैं। वे आकर सबसे पहले इस भ्रम को मिटाते हैं कि मनुष्यात्मा अपने कर्मानुसार मनुष्य के रूप में ही पुनर्जन्म लेती है, न कि पशु-पक्षियों के रूप में। चूँकि भारत ही सारे विश्व की सभ्यताओं, संस्कृतियों और धर्मों का उद्गम स्थल है; इसलिए वे परमपिता शिव आकर पहले **भारत के उत्थान और पतन की ही कहानी** सुनाते हैं। शिव भगवानुवाच है कि 'मनुष्यात्मा इस 5000 वर्ष के ड्रामा में या सृष्टि-चक्र में अधिक से अधिक 84 जन्म लेती है, न कि 84 लाख योनियों में भ्रमण करती है।' (जैसा कि पहले अध्याय में स्पष्ट किया गया है।)

अब भारत कौन है? क्या समुद्र एवं हिमालय से घिरे इस भूखंड को ही भारत कहेंगे? नहीं, भारत तो वास्तव में यह श्रेष्ठातिश्रेष्ठ आत्मा (या परम आत्मा) है, जो कि भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है। भारत माता है तो ज़रूर पिता भी होना चाहिए; क्योंकि भारत में तो केवल युगल रूप का गायन व पूजन होता है। यही भारत माता एवं पिता 5000 वर्ष के इस नाटक के आरम्भ में लक्ष्मी-नारायण थे। अतः इस चित्र में सृष्टि के मात-पिता और उनके साथ हम बच्चों के 84 जन्मों की कहानी बताई गई है। सतयुग के आदि में महाराजकुमार एवं महाराजकुमारी के रूप में श्री कृष्ण एवं श्री राधे, संगमयुगी लक्ष्मी-नारायण के यहाँ जन्म लेते हैं और बड़े होने पर स्वयंवर के बाद उन्हें भी लक्ष्मी-नारायण की उपाधि मिल जाती है। इस प्रकार संगमयुगी लक्ष्मी-नारायण के अलावा सतयुग में ल०ना० की 8 गद्दियाँ (पीढ़ियाँ) चलती हैं, जो 'सूर्यवंशी' पीढ़ियाँ कहलाती हैं; किंतु वहाँ कृष्ण के साथ न तो कंस होता है, न ही भागवत में वर्णित चरित्र और न ही महाभारत का युद्ध घटित होता है; क्योंकि भगवान शिव द्वारा स्थापित स्वर्ग में दुःख -अशांति का नामोनिशान नहीं होता। वास्तव में ये सभी कथाएँ सूक्ष्म रूप में संगमयुग में घटती हैं और द्वापरयुग में कथाओं के रूप में मार्गदर्शन हेतु ऋषियों द्वारा लिखी जाती हैं।

सतयुग के अंतिम ल०ना० की सन्तानों को राज्य करने का प्रारब्ध प्राप्त नहीं होता ; क्योंकि उन्होंने संगमयुग में पूरा पुरुषार्थ नहीं किया था। अतः राज्य की बागडोर श्री सीता -राम नामक देवताओं के हाथ में आ जाती है, जिसके साथ ही त्रेतायुग एवं **'चंद्रवंश'** का प्रारम्भ होता है। त्रेतायुग में देवताएँ 12 जन्म लेते हैं; इसलिए यहाँ श्री सीता-राम की 12 गद्दियाँ चलती हैं। जैसे सतयुग में कृष्ण के साथ कंस नहीं होता है , उसी प्रकार यहाँ राम के साथ रावण नहीं होता। भागवत और महाभारत की भाँति रामायण की घटनाएँ भी सूक्ष्म रूप में संगम पर घटती हैं, जो बाद में रामायण की कथा के रूप में द्वापरयुग में लिखी जाती है। रावण-राज्य अर्थात् पाँच

विकारों का राज्य तो द्वापरयुग में आरम्भ होता है। त्रेतायुग के आदि में भारत की ज नसंख्या लगभग 2 करोड़ होती है और इस युग के अंत तक 9-10 करोड़ तक पहुँच जाती है। त्रेता के आरम्भ में देवताएँ 14 कला सम्पूर्ण होते हैं; लेकिन 12 जन्म लेते-लेते 6 कलाएँ और घट जाती हैं। ये कलाएँ वास्तव में आत्मिक स्थिति की विभिन्न अवस्थाएँ हैं, जो चंद्रमा की भाँति सतयुग से कलियुग तक घटतीं और सिर्फ़ संगमयुग के शूटिग काल में बढ़ती हैं। त्रेतायुग भी 1250 वर्ष का होता है; किंतु यहाँ सतयुग की तुलना में 4 जन्म अधिक लेने के कारण उसके अनुपात में आयु एवं सुख भी कम होता है। सतयुग एवं त्रेतायुग को मिलाकर **'राम-राज्य'** कहा जाता है; क्योंकि जो आत्माएँ स्वर्णिम संगमयुग पर लक्ष्मी-नारायण के रूप में प्रत्यक्ष होती हैं, वही त्रेतायुग में प्रथम सीता-राम का भी पार्ट बजाती हैं।

त्रेतायुग के अंत में जब आत्मा में केवल 8 कलाएँ रह जाती हैं तब सभी आत्माएँ कुछ-न-कुछ देह-अभिमान में आ जाती हैं। इसी के साथ स्वर्ग की अवधि समाप्त होकर **'रावण-राज्य'** या नर्क का समय या द्वापरयुग प्रारम्भ होता है। द्वापरयुग भी 1250 वर्ष का होता है, जिसमें आत्माएँ 21 जन्म लेती हैं। देह-अभिमान में आते ही देवताएँ साधारण मनुष्य बन जाते हैं और काम-क्रोधादि पंच विकारों के वशीभूत होकर, दुःख एवं अशांति के दलदल में फँस जाते हैं। द्वापर से अधिकतर कर्म, विकर्म होते हैं; क्योंकि देह-अभिमान में कर्म किए जाते हैं। इस प्रकार द्वापरयुग से कर्मबंधनों का एक सिलसिला प्रारम्भ हो जाता है , जो संगमयुग के अंत में समाप्त होता है। द्वापर से, पाप कर्मों के कारण, दुःखी मनुष्य शांति और सुख के लिए भगवान का आश्रय लेते हैं। सनातन धर्म की आत्माएँ सर्वप्रथम मंदिरों का निर्माण कर शिवलिंग के रूप में उनकी अव्यभिचारी पूजा प्रारम्भ करती हैं, जिन्होंने उन्हें संगमयुग पर देवी-देवता बनाया था। इस युग के आरम्भ में राजा विक्रमादित्य द्वारा निर्मित सोमनाथ मंदिर इसका साक्षी है। वैसे संसार भर में खुदाइयों में द्वापरयुगीन शिवलिंग या शंकर की नग्न मूर्तियाँ पाई गई हैं। बाद में भारतवासी अपने ही पवित्र रूप अर्थात् सतयुगी देवी-देवताओं की पूजा करना प्रारम्भ करते हैं। सर्वप्रथम श्री लक्ष्मी-नारायण के मंदिर तथा तत्पश्चात् श्री सीता एवं श्री राम के मंदिर बनवाए जाते हैं। जैसा कि चित्र में स्पष्ट है कि देवताओं की युगल रूप में पूजा करने वाले ताजधारी हैं , जबकि कृष्ण की सिंगल पूजा करने वालों को ताज नसीब नहीं होता। इससे भारत में माता के रूप में देवी को न दिया जाने वाला सम्मान एवं उसका परिणाम स्पष्ट होता है। द्वापरयुग के प्रारम्भ में कुछ ही समय बाद भारत में ऋषियों द्वारा शास्त्रों की रचना का कार्य प्रारम्भ होता है; जैसे- **भगवद्गीता, वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत** आदि। जैसा कि कल्पवृक्ष के चित्र में बताया गया है कि द्वापरयुग से अन्य धर्मों की स्थापना भी प्रारम्भ हो जाती है; चूँकि इस चित्र में भारत के 84 जन्मों की कहानी का ही चित्रण है; इसलिए यहाँ अन्य धर्मों के उद्भव और विकास की चर्चा नहीं की जा रही है। द्वापरयुग से ही भारत में विदेशी आक्रमणकारियों का आगमन और भारत पर उनका दुष्प्रभाव आरम्भ हो जाता है। सबसे पहले तो भारतवासी अपने धर्म का नाम ही भूल जाते हैं और विदेशियों द्वारा दिया गया नाम **'हिंदू धर्म'** ही प्रचलित हो जाता है।

कलियुग का प्रारम्भ होते ही हिंदू धर्म में भक्ति भी व्यभिचारी बनने लगती है अर्थात् एक शिव की भक्ति से आरम्भ होकर अब वह हज़ारों-करोड़ों देवी-देवताओं की पूजा में परिवर्तित हो जाती है। पशु योनियों के रूप में देवताओं की भक्ति तथा पेड़-पौधों एवं जड़ वस्तुओं की पूजा भी प्रचलित हो जाती है। यहाँ तक कि पंच तत्वों के बने देहधारियों की भी पूजा प्रारम्भ हो जाती है। व्यभिचारी भक्ति के साथ अंधविश्वास, कुरीतियाँ और अर्थहीन रीति-रस्म, रिवाज़ भी भारतीय समाज में व्याप्त हो जाते हैं। देवी-देवताओं की भव्य पूजा कर उन्हें पानी में डुबो देना भी अर्थहीन रिवाज़ों का ही एक उदाहरण है। भारत में धर्म के पतन के साथ ही मनुष्यों के चरित्र का पतन भी कलियुग अंत तक चरम सीमा पर पहुँच जाता है। अधिकतर मनुष्य धर्मभ्रष्ट, कर्मभ्रष्ट और नास्तिक बन जाते हैं। धर्मसत्ता और राज्यसत्ता, दोनों का ही पतन हो जाता है। कलियुग में मनुष्यात्माएँ 42 जन्म लेती हैं। इसलिए एक ओर जहाँ जनसंख्या बढ़ती है तो दूसरी ओर आयु कम हो जाती है। रोग, शोक एवं

अशांति बढ़ जाती है। किसी समय सोने की चिड़िया कहलाने वाला भारत, अन्य देशों तथा अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों से आर्थिक सहायता माँगने की स्थिति तक पहुँच जाता है। खास भारत एवं आम विश्व के इस पतन को जब वेद, शास्त्र, गुरू या धर्मपिताएँ नहीं रोक पाते, तब परमपिता शिव को विश्व का उद्धार करने के लिए भारत भूमि पर अवतरित होना पड़ता है।

5000 वर्ष के इस ड्रामा के अंत में, भगवान एक साधारण वृद्ध मानव के तन में प्रवेश कर गीता-ज्ञान एवं राजयोग की शिक्षा से भारत को स्वर्ग बनाते हैं, जहाँ भगवान को पहचानकर पवित्र बनने वाली विश्व की श्रेष्ठ आत्माएँ एकत्रित होती हैं। उनके अवतरण का यह समय 'संगमयुग' कहलाता है, जिसके अंत में विनाश के पश्चात् भारत के अलावा सभी धर्मखंड 2500 वर्षों के लिए समुद्र में समा जाते हैं। महाविनाश के बाद अधिकतर आत्माएँ सज़ाएँ खाकर, पवित्र होकर, उस निराकार के साथ परमधाम लौट जाती हैं; किंतु कुछ श्रेष्ठ आत्माएँ भारत खंड में बच जाती हैं, जो कि देवताई सृष्टि का आरम्भ करती हैं। ये बीजरूप साढ़े चार लाख आत्माएँ अपने बच्चों सहित पूरे 84 जन्म लेती हैं; परंतु उसके बाद जो आत्माएँ परमधाम से उतरकर आती हैं, वे कालक्रमानुसार कम जन्म लेती जाती हैं। भारत के आध्यात्मिक पतन के साथ-2 विश्व का भी पतन होता है; किंतु भारत की तुलना में विदेशी उतना अधिक दुःखी तथा पतित नहीं बनते हैं; क्योंकि उनका पार्ट इस सृष्टि में द्वापरयुग से प्रारम्भ होता है। भारतवासी सतयुग में जितने श्रेष्ठ और पावन बनते हैं, कलियुग अंत तक उतने ही अधिक भ्रष्ट तथा पतित बन जाते हैं। इसलिए कलियुग अंत में जब महाविनाश होगा तब विदेशी तो अणु बम्बों की विध्वंसकारी शक्ति के चलते अधिक दुःख अनुभव किए बिना कुछ ही क्षणों में शरीर छोड़ दें गे; किंतु भारतवासी, जिनके पापों का खाता अधिक है, वे लम्बे समय तक दुःख-दर्द एवं पश्चाताप का अनुभव करते हुए, प्राकृतिक आपदाओं एवं गृह युद्ध द्वारा पापों को विशेष रूप से मिटाकर, परमधाम लौटेंगे; परंतु विनाश की इस विभीषिका के बीच परमपिता+परमात्मा का अलौकिक परिवार अतीन्द्रिय सुख-शांति का उसी प्रकार अनुभव करेगा, जैसे कि भक्त प्रह्लाद की कथा में प्रसिद्ध है।

जो आत्माएँ त्रिमूर्ति शिव भगवानुवाच को समझकर पवित्र बनेंगी, वे पुनः मनुष्य से देवता बनेंगी और भारत में सतयुगी स्वर्ग का शुभारम्भ करेंगी; किंतु जो जानकर भी अनजान रहेंगी और पापों का बोझ, राजयोग की प्रक्रिया से नहीं मिटाएँगी, वे अणु युद्ध, विश्व युद्ध, प्राकृतिक आपदाओं, हिंसक युद्ध एवं (धर्मराज की सज़ाओं) आदि के द्वारा पापों का विनाश कर परमधाम लौटेंगी तथा अपने समय पर पुनः अगले कल्प में अपना पार्ट बजाने आएँगी। इस प्रकार भारत के 84 जन्मों की इस कहानी की हर 5000 वर्ष बाद पुनरावृत्ति होती रहती है।